पंचम अध्याय : आल्वार संत 'पेरियाल्वार' और अष्टछाप कवि 'सूरदास' का तुलनात्मक अध्ययन

5.1 आल्वार संत पेरियाल्वार के 'प्रबंधम्' एवं सूरदास के 'सूरसागर' का विवेचन

5.2 पेरियाल्वार एवं सूरदास के आराध्य का तुलनात्मक अध्ययन

- 5.2.1 आराध्य के प्रति विनीत भावना के पद
- 5.2.2 श्रीकृष्ण जन्मोत्सव के पद
- 5.2.3 लोरी गीत की अवस्था के पद
- 5.2.4 चंद्रदर्शन के पद
- 5.2.5 प्रेम का संयोग एवं वियोग पक्ष
- 5.2.6 गोपियों की उलाहना के पद
- 5.2.7 गोचारण के पद

5.3 पेरियाल्वार और सूरदास की रामभक्ति

5.4 संत पेरियाल्वार की सांस्कृतिक मान्यताएं

5.5 अष्टछाप कवि सूरदास की सांस्कृतिक मान्यताएं

5.6 पेरियाल्वार एवं सूरदास की काव्य शैली

पंचम अध्याय :

आल्वार संत 'पेरियाल्वार' और अष्टछाप कवि 'सूरदास' का तुलनात्मक अध्ययन

5.1 आल्वार संत पेरियाल्वार के 'प्रबंधम्' एवं सूरदास के 'सूरसागर' का विवेचन

आल्वार संत पेरियाल्वार का 'प्रबंधम्'

आल्वार संत पेरियाल्वार की 'तिरुप् पल्लाण्डु' और 'पेरियाल्वार तिरुमोलि' दो रचनाएं हैं। पेरियाल्वार ने भक्ति के 473 पदों की रचना की है। 'तिरुप् पल्लाण्डु' दिव्य मंगल गीत है। जिसमें भगवान की रक्षा की कामना की गई है। इसमें भगवान की मंगल कामना के बारह पद हैं। 'तिरुप् पल्लाण्डु' का अर्थ है जुग जुग जीयो। पेरियाल्वार अर्थात् 'विशेष आल्वार' जिनकी भक्ति में भगवान के मंगल की कामना की है। भक्त की दो दशाओं को बताया गया है ''भगवान के भक्त की दो दश्ताायें होती हैं–एक है ज्ञान दशा, और दूसरी है प्रेम दशा। ज्ञानदशा में भक्त भगवान के रक्षत्व पर विश्वास करता है और आत्म रक्षा के लिए उन्हींकी शरण में रहता है। प्रेमदशा में स्थिति इसके विपरीत है। तब भगवान के प्रति भक्त का प्रेम अपरिमित रहता है। अतः अपनी प्रेममूलक भक्ति के कारण भक्त का अंतस्तल भगवान के हित के लिए अतीव व्याकुल रहता है। इसी प्रेम दशा तथा इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न व्याकुल स्थिति के कारण पेरियाल्वार भगवान की मंगल कामना करते हैं।''[1] विष्णुचित्त का भगवान के प्रति दिव्य मंगल भाव इन्हें पेरियाल्वार अर्थात् 'विशेष आल्वार' बना देता है।

'पेरियाल्वार तिरुमोलि' जिसमें भक्ति के 461 पद हैं। जो पाँच शतकों में विभाजित हैं और प्रत्येक शतक दस शतकों में। प्रबंध का आरंभ रक्षामंगल (तिरुप्पलाण्डु) से होता है। श्रीकृष्ण की बालमाधुरी में आल्वार इतने मग्न हुए कि साक्षात् यशोदा बन गए। इनके

पदों में कृष्ण के जन्म से लेकर किशोरावस्था की क्रीड़ाओं का साक्षात्कार होता है। इन्होंने बाल कृष्ण की विभिन्न छवियों का वर्णन किया है। पेरियाल्वार स्वयं को उनकी माता यशोदा मानकर उनकी बालचेष्टाओं का वर्णन करते हैं। इन्होंने 'पिळ्ळै तमिल' अर्थात् बाल चरित्र का निर्माण किया है। इन्होंने बालकृष्ण की अतिसूक्ष्म लीलाओं का गायन किया है। कृष्ण का जन्म, गोकुल में नंदोत्सव, श्रीकृष्ण को पालने में सुलाना, लोरी सुनाना, कनछेदन, चाँद को बुलाना, स्नान करना, ताली बजाना, नर्तन करना, हौआ दिखाना, माखन चोरी, बछड़ों को खोल देना आदि बाल लीलाओं का वर्णन किया है। पेरियाल्वार ने स्वंय माता बनकर कृष्ण विषयक अपनी चिंताओं को दिखाया है। पेरियाल्वार के कृष्ण कोई साधारण बालक नहीं हैं। वह सर्वसम्पन्नशाली, सर्वव्यापक एवं सर्वशक्तिमान परमेश्वर हैं। उनके हर पद में कृष्ण के विभिन्न अवतारों का नाम लेकर स्तुतियाँ की गई हैं। उनके कृष्ण शेषशैयाधारी वैभवशाली कृष्ण हैं। पेरियाल्वार के पदों में माता की पुत्री विषयक चिंता दिखाई देती हैं। पेरियाल्वार, गोपियों की भी माता बन जाते हैं और अपनी पुत्री की चिंता करने लगते हैं, जो कृष्ण के साथ है। पेरियाल्वार के काव्य में रामभक्ति के पद मिलते हैं। दो दशको में श्रीराम संबंधी पद हैं। एक दशक में राम जी का संदेश हनुमान जी, सीता के पास लेकर जाते हैं। इनके पदों में सर्वमंगल की कामना की गई है।

आल्वार के पदों में दास्य और वात्सल्य भाव की भक्ति मिलती है। दास्य भाव की भक्ति के अंतर्गत आल्वार अपना सम्पूर्ण दायित्व प्रभु पर डालकर निश्चिंत हो जाते हैं। पेरियाल्वार का विश्वास दृढ़ है, हृदय में किसी प्रकार का संशय नहीं है और सदैव एक ही कामना है कि शंख और चक्र धारण करने वाले अपने दास की प्रत्येक स्थिति में रक्षा करेंगे।

सूरदास का 'सूरसागर'

'सूरसागर' हिंदी कृष्ण भक्त कवि सूरदास का प्रामाणिक ग्रंथ है। सूरसागर का प्रतिपाद्य श्रीमद्भागवत पर आधारित है। सूरदास जी ने श्रीमद्भागवत की अनुच्छाया पर अपने सूरसागर की रचना की है, अतैव उनके कथानक में एकसूत्रता का परिचय प्राप्त होता है और यही

कारण है जिससे उनका काव्य मनोरम हो गया है। जिस प्रकार भागवत बारह स्कन्धों में विभाजित है, उसी प्रकार सूरसागर में बारह स्कन्ध हैं। नवम् स्कन्ध में श्रीरामावतार का उल्लेख है। दशम स्कन्ध में श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन मिलता है। सूरदास ने सूरसागर में सवा लाख पदों की रचना की है। इन पदबाहुल्य में भाव बाहुल्य का समावेश होने से यह पद अत्यंत मनोहर है। भागवत में राधा अनुपस्थित है, जबकि सूरसागर में राधा कृष्णप्रिया हैं। सूर को राधा के मान पर अभिमान है। सूरसागर में कृष्णलीलाओं का व्यवस्थापन भागवत के कथाक्रमानुसार हुआ है। सूरसागर का मुख्य वर्ण्य विषय श्रीकृष्ण की लीलाओं का गायन रहा है। श्रीकृष्ण की बाल अवस्था, विविध लीलाएँ, ब्रजवास, मथुरा प्रयाण, द्वारका गमन और कुरूक्षेत्र में ब्रजवासियों से भेंट का क्रमबद्ध वर्णन किया है।

सूरसागर में आत्मनिवेदन के पद है। राधा–कृष्ण की विविध लीलाओं का चित्रण मिलता है। सूरदास का भक्त हृदय श्रीकृष्ण के प्रत्येक क्रियाकलाप में लीलाओं का दर्शन करता है। सूर के कृष्ण जब चलते हैं, तो उसमें एक लीला है। श्रीकृष्ण खाते हैं, उठते हैं, बैठते हैं, चाँद माँगते हैं, गोपियों के घर चोरी करते हैं, मटकी फोड़ते हैं, धेनु चराते हैं, रास रचाते हैं, असुरों का संहार करते हैं, वेणु वादन करते हैं, गोपियों से प्रेम निवेदन करते हैं, उनसे छल करते हैं, ऊखल से बंधते हैं, कालिया मर्दन करते हैं, चीर चुराते हैं, राधा के साथ कुंजों में विहार करते हैं, कुब्जा उद्धार करते हैं, कंस वध करते हैं, गोपियों को उद्धव द्वारा संदेश भेजते हैं आदि–आदि, तो यह सब श्रीकृष्ण के सामान्य क्रियाकलाप न होकर, कृष्णलीलाएं हैं। जिनका वर्णन सूरसागर में गेय शैली में हुआ है।

सूरसागर और पेरियाल्वार तिरूमोलि दोनों में श्रीकृष्ण की लीलाओं का अद्‌भुत चित्रण है। सूरदास का कृष्णभक्तिकाव्य भावपक्ष और कलापक्ष दोनों ही दृष्टियों से सम्पन्न है। सूर का भावावेग अत्यंत सीमाओं को लांघकर व्यक्ति को कृष्ण के अनुराग में रंग देता है। सूरसागर में कृष्ण जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का संकेत मिलता है। इसकी रचना करके सूर ने अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। राधा और कृष्ण के अनंत आनंददायक लीलाओं के साथ–साथ भ्रमरगीत की कल्पना सूर की अत्यंत नई सूझ है। जिसकी आगे चलकर परम्परा ही स्थापित हो गई। सूरसागर में सामाजिक वातावरण के अधिक तत्त्व उपलब्ध

होते हैं। सूरदास ने अपने काव्य में तत्कालीन समाज में प्रचलित अन्यान्य परंपराओं के आधार पर अनेक चित्र अंकित किए है।

5.2 पेरियाल्वार एवं सूरदास के आराध्य का तुलनात्मक अध्ययन

पेरियाल्वार और सूरदास दोनों के भक्त हृदय ने श्रीमन्नारायण के श्रीकृष्ण स्वरूप को अपना आराध्य बनाया है। छठी–सातवीं शताब्दी में दक्षिण प्रदेश में श्रीकृष्ण के बालमाधुर्य का जो वर्णन संत पेरियाल्वार के पदों में मिलता है। वही माधुर्य उत्तर भारत के अष्टछाप कवि सूरदास के पदों में मिलता है। ''पेरियाल्वार ने कण्णन (कृष्ण) को बालक रूप में भवित कर भक्तिपूर्ण पदों की रचना की है।''[2] स्थान, काल, भाषा, संस्कृति, लोकव्यवहार, पारिस्थितिक परिवेश में अंतर होने के बावजूद एक अद्‌भुत साम्य इनके पदों में मिलता है।

5.2.1 आराध्य के प्रति विनीत भावना के पद

पेरियाल्वार और सूरदास दोनों ने अपने आराध्य की प्रशस्ति में स्वंय को दास बनाकर आत्मनिवेदन किया है। सूरदास ने सूरसागर के प्रथम पद में श्री हरि के चरण कमलों की वंदना की है। सूरसागर का आरंभ विनय के पदों से होता है।

चरण कमल बंदौ हरि राइ।

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे को सब कुछ दरसाई।।

बहिरौ सूनै, मूक पुनि बोले, रंक चलै सिर छत्र धराई।

सूरदास स्वामी करूनामय, बार–बार बंदौ तिहि पाइ।।[3]

सूरसागर के प्रथम पद श्रीकृष्ण को सर्वसार्म्थयवान घोषित करते हुए उनके कमल रूपी चरण की वंदना करते हैं। जिनकी कृपा से लंगड़ा व्यक्ति भी पर्वतों को पार कर लेता है, अंधे को सब दिखने लगता है, बहिरे को सुनाई देता है, मूक पुनः बोलने लगता है, कंगाली भी छत्रधारी राजा हो जाता है। सूरदास कहते हैं, मैं ऐसे दयामय स्वामी की बार–बार वंदना करता हूँ।

पेरियाल्वार का भक्त हृदय अद्‌भुत है, जो अपने आराध्य की मंगल कामना करता है। पेरियाल्वार कृत 'तिरुप् पल्लाण्डु' (दिव्य मंगल गीत) में भगवान की रक्षा की कामना की गई है। जब भगवान के प्रति प्रेम अपरिमित रहता है, तो भक्त उनकी ही रक्षा की कामना करने लगता है। पेरियाल्वर ने भगवान की रक्षा के लिए मंगल गीत गाए हैं।

पल्लाण्डु पल्लाण्डु पल्लायिरत्ताण्डु

पल्कोडि नूरायिरमुम्

मल्लाण्ड तिण्डोल् मणिवण्णा! उन्

शेवडि चेव्वि तिरुक् काप्पु।।[4]

''चाणूर, मुष्टिक आदि मल्लों का संहार करने वाले भुज–बल से युक्त नील रत्नवत् वर्ण के हे भगवान नारायण! अनेकानेक वर्षों तक, कल्प–कल्पान्त तक तथा कोटि कोटि सहस्त्रों वर्षों तक आपके सुंदर श्रीचरणों का असीम सौंदर्य बना रहे!''[5]

सूरदास अपने आराध्य के चरण कमलों की वंदना करते हैं। जिनकी कृपा से असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाता है। पेरियाल्वार, भगवान के चरणों की वंदना नहीं करते अपितु उनके चरणों के सौंदर्य की मंगल कामना करते हैं। इस आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कृष्ण की भक्ति उनके प्रति अनन्यम अनुराग को तो दर्शाती ही है, साथ ही अपने हित की आकांक्षा और कुछ–कुछ ईश्वर का भय भी दृष्टिगोचर होता है। जबकि इसी संदर्भ में पेरियाल्वार के पदों में कृष्ण के प्रति अनुराग तो है ही साथ–साथ भय या हित की आकांक्षा के स्थान पर उनके (कृष्ण) हित की कामना प्रबल दिखाई देती है।

5.2.2 श्रीकृष्ण जन्मोत्सव के पद

पेरियाल्वार और सूरदास दोनों के पदों में श्रीकृष्ण जन्मोत्सव हर्षोल्लास के साथ वर्णित है। ऐसा प्रतीत होता है मानो दोनों द्वापर युग में पहुँच गए हों

ओडुवार् विषुवार् उकन्तालिप्पार्

नाडुवार् नम्पिरान् एंकुन्तान् एन्पार्

पाडुवार्कळुम् पल् परै कोट्ट निन्रु

आडुवार्कळुम् आयिट्रु आय्प् पाडिये।।[6]

नंद के यहाँ कृष्ण के जन्म की खबर पाकर गोकुलवासी उत्सव मना रहे हैं। नंद बाबा के प्रासाद की ओर दौड़ रहे हैं; 'प्रासाद के आंगन में तेल–मिश्रित हल्दी चूर के कीचड़ के फैल जाने से दौड़ आने वाले लोग कीचड़ में फिसलकर गिर पड़ते हैं। फिर उठते हैं; दौड़ते हैं; अतिशय आनन्द के कारण ऊँची ऊँची आवाज करते हैं। दैवी शिशु की तलाश करते हैं और चारों तरफ़ पूछते हैं कि हमारे स्वामी कहाँ हैं। फिर यह सोचकर कि शीघ्र उनके दर्शन होनेवाले हैं, लोग आनन्द–मग्न होकर गाते हैं; नाना प्रकार के वाद्य बजाते हैं; उन वाद्यों के ताल के अनुसार नर्तन भी करते हैं।'[7]

प्रौढ़ावस्था में नंद–यशोदा को पुत्र की प्राप्ति हुई है। पूरे नंदगांव में आनंदोत्सव मनायाा जा रहा है। सूरसागर में कृष्ण जन्मोत्सव का बड़े विस्तार से वर्णन किया है।

नंदराइ कैं नवनिधि आई।

माथैं मुकुट, स्त्रवन मनी कुंडल, पीत वसन, भुज चारि सुहाई।।

बाजत ताल मृदंग जंत्र गति, चरचि अरगजा अंग चढ़ाई।

अच्छत दूब लिए रिसि ठाढ़े, बारनि बंदनवार बंधाई।।

छिरकत हरद दही, हिय हरषत, गिरत अंक भरि लेत उठाई।

'सूरदास' सब मिलत परस्पर, दान देत, नहिँ नंद अघाई।।[8]

प्रस्तुत पद के अनुसार श्रीकृष्ण के जन्म लेने पर नंदराय के घर नवनिधियाँ (पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील और खर्व) आ गई हैं। चतुर्भुज के सिर पर मुकुट, कानों में कुंडल, तन पर पीले वस्त्र शोभा दे रहे हैं। ऋषि चावल और दूब लिए खड़े हैं। दरवाजे पर बंदनवार बांधा गया हैं। ताल–मृदंग बज रहे हैं, केसर कस्तूरी चंदन का अरगजा बनाकर उनके शरीर पर लेप लगाया गया है। हल्दी, दही छिड़की जा रही है। लोग दही हल्दी में फिसलकर गिर रहे हैं। दूसरे लोग गिरनेवाले को पकड़कर उठाए जा रहे हैं और गले से लगा रहे हैं। नंद दान देने से नहीं अघा रहें। खूब दान दे रहे हैं।

सूरदास तथा पेरियाल्वार दोनों के यहाँ कृष्णजन्मोत्सव की बधाई के चित्रण में साम्य मिलता है। वैभवमय कृष्णावतार की लीलाओं में आत्मविभोर हुए आल्वार के लिए तिरुक्कोट्टियर क्षेत्र गोकुल हो जाता है। आल्वार और सूरदास दोनों का वर्णन प्रत्यक्षदर्शी वर्णन प्रतीत होता है।

5.2.3 लोरी गीत की अवस्था के पद

यशोदा बने पेरियाल्वार बालकृष्ण को सुलाने की चेष्टा कर रहे हैं। कृष्ण से कह रहे हैं हीरे–मणिक जड़ित सुवर्ण का पालना ब्रह्मा ने भेजा है एवं तरह–तरह के आभूषण देवताओं द्वारा भेजे गए है।

उडैयार् कन– मणिथोडु ओण्– मादुळम्–पू,

डडै विरवि–क् कोत्त एळिल तेळ्हिनोडु,

विडै–एरू कापालि ईरान् विङ्ङ–तन्दान्,

उडेयाप्! अळेल् अळेल् तालेलो,

उलहम् अळन्दाने! तालेलो।।[9]

'भूषोचित–सुवर्ण–मणि सहित बीच में मिश्रित दाडिम–पुष्प सदृश–भूषण पिरोयी हुई करधनी वृष वाहन कपाली ईश्वर ने भेजी। प्रभो, रोओ मत, रोओ मत। सो जाओ, लोक विक्रांत सो जाओ।'[10]

कन्हैया हालरू रे।

गढ़ि गुढ़ि ल्यायौ बाढ़ई, धरनी पर डोलाइ, बलि हालरू रे।

इक लख माँगे बाढ़ई, दुइ लख नंद जु देहिं, बलि हालरू रे।

रतन जडित वर पालनौ, रेसम लागी डोर, बलि हालरू रे।

कबहुँक झूलै पालना, कबहुँ नंद की गोद, बलि हालरू रे।

झूलैं सखी झुलावहीं, 'सूरदास' बलि जाइ, बलि हालरू रे।[11]

यशोदा बालकृष्ण को पालने में झूला रही हैं। बढ़ई इसे गढ़कर, धरती पर पूरा परीक्षण कर तब लाया है। बढ़ई ने इसका मूल्य एक लाख माँगा था। नंदबाबा ने उसे प्रसन्न होकर दो लाख दिए हैं। पालने में रत्न जड़े हुए हैं और रेशम की ड़ोरी लगी हुई है। कृष्ण कभी पालने में झूलते हैं, कभी नंदबाबा की गोद में आ जाते हैं। सखियाँ कृष्ण को झुला रही हैं। सूरदास पालने पर झूलते श्याम को देखकर बलि बलि हुए जा रहे हैं।

पदों से ज्ञात होता है कि आल्वार के कृष्ण वैभवशाली है। कृष्ण का अभिजात्य रूप मिलता है। वह कोई साधारण बालक नहीं हैं। उनके लिए स्वंय ब्रह्मा ने पालना भेजा है। पालना मणिक, हीरो से खंचित शुद्ध स्वर्ण से निर्मित है। वही सूरदास लोक व्यवहार में रचना करते हैं। उनके कृष्ण मिट्टी में लोटने वाले साधारण बालक हैं। उनके बालकृष्ण का पालना बढ़ई द्वारा रचित है। रत्न जड़ित पालने में रेशम की ड़ोरी है। सखियाँ उन्हें झुलाती हैं।

5.2.4 चंद्र दर्शन के पद

माता यशोदा बन पेरियाल्वार चंद्र को बुला रहे हैं। चंद्र को बुलाने के लिए कभी उन्हें प्रलोभन देते हैं, कभी उलाहना देते हैं, कभी चेतावनी देते हैं। किंतु विनय का भाव नहीं है।

शिरियन् एनरू एन् इळम्–शिड्•गतै इहळेल् कण्डाय्

शिरूमैयिन् वार्तैयै मावलि–यिडै–च–चेन्रू केळ्

शिरूमै–प् पिहे कोळ्ळिल् नीयुम् उन्तेवैक्कु उरियैकाण,

निरै–मदी! नेडु–माल् विरैन्दु उन्नै–क कूवुकिन्शन।।[12]

प्रस्तुत पद में आल्वार कहते हैं 'छोटा समझ कर मेरे इस छोटे सिंह का अनादर मत करना, देखो! छुटपन की बात को महाबलि के पास जा कर पूछ लो। यदि छोटा समझने की भूल तुम मान लेते हो तो तुम भी सेवा के योग्य बन जाओगे। समझे। पूर्ण चंद्र! सर्वश्रेष्ठ अधीरता से तुम्हें बुला रहा है।'[13]

सूरदास की यशोदा चंद्र को बुला रही हैं जब कृष्णचंद्र, चंद्र लेने की हठ करने लगते हैं

ऐसौ हठी बाल गोविंदा।

अपने कर गहि गगन बतावत, खेलन कौ माँगै चंदा।।

वासन मैं जल धरयौ जसोदा, हरि कौ आनि दिखावै।

रूदन करत, ढूँढ़त नहीं पाँवत, चंद धरनि क्यौं आवै।।

मधु मेवा पकवान मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना।

चकई डोरी, पाट के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना।।

संत उबारन, असुर संहारन, दूरि करन दुख–दंदा।

'सूरदास' बलि गई जसोदा, उपज्यौ कंस–निकंदा।।[14]

सूरदास की यशोदा के बाल गोविंदा ऐसे हठी हैं कि वह यशोदा से खेलने के लिए चाँद ही माँग रहे हैं। जिद कर रखी है कि चाँद ही चाहिए। यशोदा ने एक थाल में जल भरकर उसमें पड़ता चंद्र प्रतिबिंब बालकृष्ण को लाकर दिया। वह जल में हाथ डालकर चंद्र को ढूँढ़ने लगे। न पाने पर वह रोने लगे। फिर मैया तरह–तरह के प्रलोभन दे रही हैं कि मधु, मीठा पकवान, मिठाई जो भी चाहो मुझसे माँग लो। खिलौना ही चाहते हो तो चकई ड़ोरी ले लो, रेशम के धागे में लटकता लट्टू ले लो। संतों का उद्धार करने वाले, असुरों का संहार करने वाले, दुखों को दूर करने वाले तथा कंस का विनाश करने वाले कन्हैया उत्पन्न हो गए हैं। यशोदा उन पर बलि बलि जा रही हैं

पेरियालवार और सूरदास में यहाँ वैचारिक अंतर नज़र आता है सूरदास की यशोदा कृष्ण को बहला रही हैं। यशोदा चाँद को बुलाने का उपक्रम कर रही है। लेकिन यशोदा बने पेरियाल्वार चाँद को कृष्ण के विक्रमशाली रूप का गुणगानकर पास आने का आदेश कर रहे हैं।

आल्वार संतों में पेरियाल्वार ने बालकृष्ण की सूक्ष्मातिसूक्ष्म लीलाओं का चित्रण किया है। कुलशेखराल्वार तथा आण्डाल के काव्य में बाल प्रसंगों का केवल संकेत मात्र मिलता है। अष्टछाप के कवि परमानंददास का भी बाल चित्रण विशद एवं मनोहारी है। फिर भी मातृ हृदय की स्वाभाविकता का वर्णन करने में सूरदास का अप्रतिम है। सूर के कृष्ण की विशेषता यह है कि उन्हें जो जिस रूप में भजता है, वे उसी रूप में मिल जाते हैं।

5.2.5 प्रेम का संयोग और वियोग पक्ष

वात्सल्य भाव मानव–मन के प्रमुखतम भावों में से है, सूर ने वात्सल्य रस का अत्यंत व्यापक वर्णन किया है। इनके संयोग वात्सल्य का मुख्य आश्रय यद्यपि यशोदा ही रही हैं, तथापि देवकी, रोहिणी, वसुदेव, नंद, गोपियाँ एवं अन्य ब्रजवासी की इसके आधार आनंद से

वंचित नहीं रहे हैं। संयोग वात्सल्य की जितनी भी भूमियाँ हो सकती हैं। प्रायः उन सभी का वर्णन करके सूरदास ने विशेषतः मातृ हृदय सजीव तथा स्वाभाविक वर्णन किया है। वियोग वात्सल्य के वर्णन में भी सूरदास ने अपनी सहृदयता और मनोवैज्ञानिक का पूर्ण परिचय दिया है

देखि माई हरि जू की लोटनि।

यह छबि निरखि रही नंदरानी, असुँवा ढरि ढरि परत करोटनि।।

परसत आनन मनु रवि–कुंडल, अंबुज स्त्रवत सीप–सुत जोटनि।

चंचल अधर, चरन कर चंचल, मंचल अंचल गहत बदनोटनी।।

लेति छुडाई महरि कर सौं कर, दूरि भई देखति दुरि ओटनि।

'सूर' निरखि मुसुकाइ जसोदा, मधुर मधुर बोलति मुख होठनि।।[15]

वात्सल्य का संयोग वर्णन जितना मधुर है। यशोदा का वियोग उतना ही विकल कर देता है। वियोग की दशा में यशोदा का देवकी को संदेश सहृदय पाठक को उद्वेलित कर देता है।

सँदेसौ देवकी सौं कहियौ।

हौं तौ धाइ तिहारे सुत की, मया करत ही रहियौ।।

जदपि टेव तुम जानतिँ उनकी, तऊ मोहिँ कहि आवै।

प्रात होत मेरे लाल लड़ैतैं, माखन रोटी भावै।।

तेल उबटनौ अरु तातौ जल, ताहि देखि भजि जाते।

जोइ जोइ माँगत, सोइ सोइ देती, क्रम क्रम करिकै न्हाते।।

'सूर' पथिक सुनि मोहिँ रैनि दिन, बढ़यौ रहत उर सोच।

मेरौ अलक लड़ैतौ मोहन, ह्वैहै करत सँकोच।।[16]

यशोदा पथिक से कह रही हैं– हे पथिक, तुम मेरा यह संदेश देवकी से कहना कि मैं तुम्हारे बेटे की दूध पिलाने वाली दाई हूँ, अतः मुझ पर दया बनाए रखें। यद्यपि तुम कन्हैया की आदत अब तक जान गई होगी, फिर भी तुम्हें बता देती हूँ। सबेरा होते ही मेरे लाल को माखन और रोटी पसंद है। तेल, उबटन और गर्म जल देखते ही दूर भाग जाता है। जो–जो वो माँगता था, मैं वह–वह देती जाती थी। वह ज्यों–त्यों करके नहाते थे। अब रात दिन मुझे यही सोच बनी रहती है कि मेरा लाड़ला अपरिचितों के बीच भारी संकोच करता होगा। भूख लगने पर भी नहीं माँगता होगा, भूखा ही रह जाता होगा।

सूरदास ने मातृ हृदय का अत्यंत स्वाभाविक और सरल चित्र खींचा है। 'माता' शब्द इतना पवित्र है जिसकी व्याख्या कवि के अतिरिक्त और कोई कर ही नहीं सकता। पुत्र के वियोग में माता यशोदा जो प्रेम की असीम उपलब्धि से पूर्ण है वे प्रेम के वियोग के रूप में परिवर्तित होकर पूर्णतः के किसी भी अंश को कम नहीं कर सका है। यशोदा उन माताओं में से नहीं है, जो अपनी संतान के लिए मंगल की आशा में ईश्वर की ओर देखा करती है। वह अमंगल की आशंका से कभी उद्विग्न नहीं होती। यशोदा माता के रूप में पूर्णता को लिए हुए है।

गायों के पीछे आने वाले मोरपंखी श्रीकृष्ण के दर्शन से गोपियों की प्रेमदशा का वर्णन पेरियाल्वार इस प्रकार कर रहे हैं

शाल–प् पन्–नि़रैप् पिन्ने तल़ै–क् कांविन् कील् त्

तन् तिरुमेनि निन्रुं ऑळि तिहलल्

नील नल्–नरुङ् कुञ्चि नेत्तिरत्ताल्

अणिन्दु पल्लायर् कुल़ाम् नडुवे

कोल–च् चेन्–तामरै–क्–कण् मिळिर–क्

कुल़ल् उन्दि इशै पाड़ि–क् कुनित् आयरोडु

आलित्तु वरुहिन्र आय–प् पिळ्ळै

अल्हु कण्डु ऍन् महळ् अयर्क्किन्रदे।[17]

भावार्थ :

गायों के पीछे आनेवाले मोरपंखधारी

बालक कृष्ण का शरीर शोभायमान है।

अपने सुन्दर चिकुरों का मोर पंख से शृंगार करके

आँखों में अंजन लगाकर

गोप बालकों के साथ

बाँसुरी बजाता बालक कृष्ण आ रहा है।

गीत गाते और नृत्य करते आनेवाले

बालक कृष्ण का सौंदर्य देखकर

मेरी पुत्री प्रेमवश गद्गद् हो उठती है।[18]

पेरियाल्वार ने कृष्ण सौंदर्य पर मुग्ध कन्या की व्यामोह की दशा का वर्णन इस प्रकार करते हैं

वल्लि नुण् इदष़न्न आडै कोण्डु

वशैयरत् तिरुवरै विरित्तु उडुत्तु

पल्लि नुण् पट्राक उडैवाळ् चात्तिप्

पणैक्कच्चु उन्तिप् पलतष़ै नडुवे

मुल्लै नल् लरु मलर् वेंगै मलर् अणिन्तु

पल्लायर् कुषाम नडुवे

एल्लियम् पोताहप् पिळ्ळै वरुम्

एतिर् निन्र अंगु इन वळै इषवेल्मिने।।[19]

''नन्दनन्दन कृष्ण सुकुमार–सुकोमल वस्त्र पहनकर उसपर पट्टा लगाकर, उसमें छोटा–सा कटार खोंसे हुए और चमेली और चम्पा पुष्पों की माला पहनकर सन्ध्या काल में गोप सखाओं के बीच मोर पंखों से बने छत्र की छाया में चल रहा है। उसके आगमन के पथ पर खड़ी होकर गोप कन्यायें उसकी सुन्दर चाल पर मुग्ध हुई रहती हैं। ऐसी स्थिति में स्नेह–जनित व्यामोह के कारण उन कन्याओं का शरीर शिथिल हो जाता है; तब स्वाभाविक है कि उनके हाथों से चूड़ियां खिसक जायें।''[20]

प्रेम की व्यामोह अवस्था का चित्रण पेरियाल्वार में होता है। गोप कन्या गाय चराकर लौटते हुए कृष्ण को देखते हुए विमुग्ध हो जाती हैं तथा उसको (कृष्ण) को पुनः देखने की अकुलाहट होने लगती है। ऐसी विचित्र स्थिति उस गोपी की हो जाती है। पेरियाल्वार और सूरदास दोनों ने प्रेम के संयोग एवं वियोग पक्षों को उठाया है। सूर के पदों में कृष्ण के मथुरा गमन पर सम्पूर्ण ब्रज विरहावस्था में होता है। पेरियाल्वार एक गोप कन्या की माता बनकर उसकी विरहाकुल स्थिति का वर्णन करते हैं।

5.2.6 गोपियों की उलाहना के पद

कृष्ण की बाल क्रीडाओं में उनका माखन चोरी करना प्रसिद्ध है। कृष्ण गवाल बालों के साथ माखन चोरी करते हैं। माखन चोरी करने के साथ–साथ माखन बिगाड़ते भी हैं और फिर माखन वाल पात्र को भी तोड़ देते हैं। कृष्ण की इन शरारतों की शिकायत गोपीयाँ यशोदा से करती हैं–

वेण्णेय् विळुङ्गि वेरुङ्–कलत्तै

वेर्पिडै इट्टु अदन् ओशै केट्कुम्

कण्ण–पिरान् कर्र कल्वि तन्नै–क्

कान्क किल्लोम् उन् महनै–क् कावाय्,

पुण्णिर् पुळिप्पु एय्दाल् ओक्कुम् तीमै

पुरै–पुरैयाल् इवै शेय्य वल्ल,

अणणर्कु अण्णान् ओर महनै–प् पेर्र

अशोदै–नङ्गाय! उम महनै–क् कूवाय्।[21]

गोपियाँ यशोदा को उलाहना दे रही हैं, ''मक्खन निगल, खाली भांडे को पत्थरर पर मार, उसकी ध्वनि को श्रवण करने वाले प्रभु कान्हा की सीखी (चोरी करने की) विद्या को हम रोक नहीं पातीं। (तुम हीं) अपने पुत्र को रोको। ब्रज में इमली (रस) डालने के समान घर–घर शरारत करने में निपुण और बड़े भाई से भिन्न स्वभाववाले एक पुत्र को जन्म देने वाली पूर्ण यशोदा! अपने पुत्र को बुलाओ।''[22]

सूर की गोपियाँ अपनी शिकायतों का बड़े विस्तार पूर्वक वर्णन करती हैं–

तेरैं लाल मेरौ माखन खयौ।

दुपहर दिवस जानि घर सूनौ, ढूँढ़ि–ढँढ़ोरि आपही आयौ।

खोलि किवार, पैठि मंदिर मैं, दूध–दही सब सखनि खवायौ।

ऊखल चढ़ि, सींके कौ लीन्हौ, अनुभावत भुइँ मैं ढरकायौ।

दिन प्रति हानि होत गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ।

'सूरदास' कौं हरकि न राखैं, तैं ही पूत अनोखौ जायौ।।[23]

गोपी उलाहना देती हुई यशोदा मैया से कह रही है– 'यशोदा, तेरे बेटे ने मेरा सारा माखन खा डाला। दोपहर के समय मेरा घर सूना देखकर ढूँढ़–ढाँढ़ करता हुआ, मेरा किवाड़ खोल कर, वह घर में घुस गया और उसने सब दूध–दही अपने संगी–साथियों को खिला दिया। वह ओखरी पर चढ़ गया और सिकहर हाथ से पकड़ लिया। जो कुछ खाते–खिलाते बना, खा गया, और जो इसे पेट भर जाने के कारण नहीं रुचा, उसे उसने धरती पर लुढ़का दिया। इसी तरह यह प्रतिदिन हमारे गोरस का नुकसान करता रहता है। तुमने अपने छोरे को यह किस ढंग पर ढाल दिया है। कैसे सिखा–पढ़ा दिया है। तू उसको रोक नहीं रखती। ऐसा लगता है जैसे एक तूने ही बेटा पैदा किया है और सबने ईंट–पत्थर पैदा किए हैं। बेटे को सभी प्यार करते हैं, पर तेरे जैसा नहीं'[24]

पेरियाल्वार के प्रत्येक पद में श्रीकृष्ण के पूर्णपरमेश्वरत्त्व की भावना है। गोपियाँ उलाहना भी दे रही हैं तो यशोदा को 'पूर्णा' कहकर सम्बोधित कर रही हैं क्योंकि वह पूर्ण (परमेश्वर) को जन्म देने वाली हैं। सूरदास की गोपियों के लिए वह एक साधारण बालक है और माता यशोदा भी साधारण माता। सूर की गोपियाँ यशोदा से कहती हैं कि तूने कोई अनोखा बेटा नहीं जना है। सूर लोकव्यवहार में बात करते हैं।

5.2.7 गोचारण के पद

पेरियाल्वार और सूरदास दोनों के पदों में गोचारण संस्कृति के दर्शन होते हैं। सूरदास की यशोदा कृष्ण के गाय चराने पर बलि–बलि जा रही हैं

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।

आजु गयौ मेरी गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ।।

मो कारन कछु आन्यौ है बलि, वन–फल तोरि नन्हैया।

तुमहिँ मिले मैं अति सुख पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया।।

कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन–रोटी।

'सूरदास' प्रभु जीवहु जुग–जुग, हरि हलधर की जोटी।।[25]

कृष्ण को गोचारण के लिए भेजकर माता यशोदा बने संत पेरियाल्वार ने चिंता व्यक्त की है। कृष्ण को 'देवदेव' अर्थात् देवों का नायक कहकर आल्वार ने संबोधित किया है।

अव्वव्विडम्बुक्कु अव्वायर् पेण्डिर्कु अणुक्कनाय्

कोव्वैक् कनि वाय् कोडुत्तुक् कुष़ैमै चेय्यामे

एव्वुम् शिलैयुडै वेडर् कानिडैक् कन्रिनफ पिन्

तेय्वत् तळैवनैप् पोक्किनेन् एल्ले पावमे![26]

''देवदेव कृष्ण जगह–जगह जाकर वहां की गोप कन्याओं को अधर पान कराता हुआ निज स्नेह जताता रहा। निरन्तर ऐसी शरारत करने से वह बचे–यह सोचकर उसे मैंने गोचारण के लिए गौओं के पीछे उस भयावह जंगल में भेज दिया जहाँ कठोर धनुर्धर व्याध लोग रहा करते है। अहो! ऐसा करके मैंने कितना बड़ा महापाप कर दिया! (लाड़ले कृष्ण को मैंने कितने बड़े कष्ट में ड़ाल दिया!)''[27]

उत्तर भारत और दक्षिण भारत की सामाजिक संरचना के अनुसार, पेरियाल्वार जहाँ कृष्ण के गोचारण के लिए जाने पर व्यग्रता से उनकी प्रतिक्षा करते हैं। वहीं सूर की यशोदा पुत्र के गोचारण के लिए जाने पर प्रसन्न होती हैं कि अब उनका पुत्र उत्तरदायित्त्व पूर्ण करने लगा है।

आल्वार पूर्व तमिल के संघ साहित्य के लौकिक प्रेम–काव्यों से नायक–नायिका संबंध के संयोग–वियोग दोनों पक्षों की जिन दशाओं का निर्वाह किया गया था, उन सबका आल्वारों द्वारा प्रयोग किया गया है। मधुर भाव में ईश्वर की उपासना पहली बार आल्वारों के पदों में मिलती है। वैष्णव भक्ति साहित्य को मधुर भक्ति का उद्‌गम भी माना जाता है। पेरियाल्वार के पदों में वात्सल्य भक्ति के साथ–साथ मधुर भक्ति के दर्शन होते हैं।

'पेरियाल्वार तिरूमोलि' में पेरियाल्वार अपनी पुत्री विषयक चिंता को लेकर व्याकुल हो उठे हैं, ऐसे पद सूरसागर में नहीं मिलते, जहाँ सूरदास गोपियों की माता बनकर सोचते हों। पेरियाल्वार की देखा–देखी परवर्ती काल में 'पिळळै तमिल' पद्धति के अनेक खंडकाव्यों की रचना हुई है। अष्टछाप के कवियों ने पेरियाल्वार के समान बाल चेष्टाओं का ऐसा क्रमबद्ध वर्णन किसी विशिष्ट प्रणाली के खंड काव्य के रूप में नहीं किया है। तथापि, सूरदास ने वात्सल्य रस का कोना कोना झाँककर अपनी बंद आँखों से ही अद्‌भुत वर्णन किया है। कतिपय प्रसंगों में सूरदास पेरियाल्वार से भी आगे बढ़े है। परंतु इसका कारण पेरियाल्वार और सूरदास में करीब आठ वर्षों की लम्बी परंपरा है।

5.3 पेरियाल्वार तथा सूरदास की राम भक्ति

आल्वारों का काल तमिल साहित्य का महाकाव्य–युग नहीं था। वह भक्ति के भावावेग का युग था। अतएव आल्वारों ने भावुकतापूर्ण भक्ति प्रधान गीत रचे। आल्वार उन गीतों को गाते–गाते आत्मविभोर हो जाते थे। उन्होंने साधारण जनता में भक्ति के बीज बोने का महान कार्य किया। आल्वार संतों ने कृष्णलीला का कोई प्रबंध नहीं रचा है। कृष्णलीलाओं का जैसा प्रबंध रूप आल्वारों के पदों से चुनकर प्रस्तुत किया जाता है, वैसे ही आल्वारों ने राम–काव्य से संबंधित पदों का संकलन करने पर रामायण की कथा उपलब्ध हो जाती है। आल्वार संतों में तिरूमंगै आल्वार, कुलशेखर आल्वार, पेरियाल्वार तथा नम्मालवार के काव्य में राम भक्ति के दर्शन होते हैं। पोयगै आल्वार तथा आण्डाल के पदों में अपेक्षाकृत कम मात्रा में रामायण संबंधी उल्लेख प्राप्त होते है। आल्वार भक्त प्रधानतः राम उपासक थे। तथापि, उन्होंने रामोपासना भी की है। पेरियाल्वार ने दो दशकों में राम के चरित्र का गुणगान किया है। एक दशक में पेरियाल्वार गोप कन्याएं बनकर, उनके माध्यम से ही राम–कृष्ण के वृतांतो द्वारा उनकी महिमा का वर्णन कर रहे हैं। दूसरे दशक में हनुमान जी की सीता जी से भेंट का वर्णन करते हैं।

एक ही समय में पेरियाल्वार श्रीकृष्ण और श्रीराम का अनुभव कर रहे हैं। पेरियाल्वार दो गोपियाँ बन जाते हैं, जिनमें एक गोपी श्रीकृष्ण लीलाओं का गान करती हैं और दूसरी गोपी श्रीराम लीलाओं का।

'यहाँ पर एक ऐतिह्य प्रचलित है– आचार्य श्री पराशर भट्ट से उनके शिष्य नंजीयर ने प्रश्न किया–एक ही समय आल्वार की दो कुमारियों की दशा कैसे हो सकती है?, श्रीभट्ट ने उत्तर दिया–''उपनिषद् से विदित होता है कि श्रीबैकुंठ में विद्यमान आत्माओं में से एक एक अनेक शरीर धारण कर परमात्मा की सेवा करता है। उसी तरह आल्वार भी कर सकते हैं''[28]

ताल सहित गाते हुए कन्याएँ परिक्रमा लगा रही हैं। यह कन्याओं की एक क्रीडा है जिसका उल्लेख प्राचीन तमिल संघकाल साहित्य में पाया जाता है। बीच में जलते हुए एक स्तम्भ–दीप को रखकर कन्याएं चक्राकार खड़ी हो जाती हैं और हस्त ताल के साथ गाते हुए झुकते–उठते परिक्रमा करती हैं। एक पक्ष की कन्याएं पद के पूर्वार्द्ध को तथा दूसरे पक्ष की कन्याएं उत्तरार्ध को गाती हैं

मार्रु–त्–ताय् शेन्रू वनम् पोहे एन्रिड,

ईर्रु–त्–ताय् पिन् तोडर्न्दु एम्–पिरान् एन्रु अळ,

कुर्रु–त् ताय् शोल्ल–क् कोडिय वनम् पोन,

शीर्रम इलादानै–प् पाडि–प् पर

शीतै–मणाळनै–प्पाडि–प् पर।[29]

'माता (सुमित्रा देवी) ने जा कर (श्रीराम से) कहा कि 'तुम वन चले ही जाओ'। जन्म देने वाली माता (कौशल्या देवी) अनुगमन कर 'मेरे प्रभु' कह रो उठी। मृत्यु (सदृश) माता (कैकयी) के कहने से कठिन वन जाने वाले क्रोध–विहीन (श्रीराम) का गान कर उडो। सीता प्रियतम का गान कर उडो।

{कैकेयी के वचनानुसार जब राम जी वन जाने को उद्यत हुए तब लक्ष्मण भी उनके साथ जाने का निश्चय करके माता सुमित्रा से विदा लेने उनके पास गये। माता ने सहर्ष लक्ष्मण को आशीष दिया कि राम और सीता की छाया की तरह उनके पीछे जा कर वहाँ उनकी सेवा–सुश्रुषा करते रहो। ये है वाल्मिकी रामायण के कथांश।

परंतु इस पद में विष्णुचित्त कहते हैं कि पुत्र को आदेश देने के बाद सुमित्रा जी स्वयं श्रीराम के पास जा कर उनसे बोली–यहाँ स्वार्थी लोग राज्य चाहते हैं अतः तुम्हें वन चले जाना ही उचित है। जहाँ ऐसे नीच जन नहीं रहते। तुम वन चले ही जाना।}'[30]

आल्वारों के पदों की तुलना वाल्मिकी रामायण से करने पर बहुधा अंतर दृष्टिगत होते है। आल्वारों ने कृष्ण काव्य की तरह इसे प्रबंधत्मक रूप नहीं दिया है। सूरदास ने श्रीकृष्ण लीलाओं की तरह श्रीराम लीला को भी एक प्रबंधात्मक रूप दिया है।

सूर श्रीराम जन्मोत्सव का वर्णन करते हुए विभोर होते हैं, किंतु मर्यादा का ध्यान रखते हैं क्योंकि श्रीराम राजवंश में उत्पन्न हुए है। राम के प्राकट्य का अत्यंत सुंदर वर्णन सूरसागर में करते हैं

रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर।

देस–देस तैं टीकौ आयौ, रतन–कनक–मनि–हीर।

घर–घर मंगल होत बधाई, अति पुरबासिनि भीर।

आनँद–मगन भए सब डोलत, कछू न सोध सरीर।

मागध–बंदी–सूत लुटाए, गो–गयंद–हय–चीर।

देत असीस 'सूर', चिर जीवौ रामचंद्र रनधीर।।[31]

''रघु के वंश में रघुवीर प्रकट हुए है। देश–देशांतर से इस अवसर पर रत्न, सोना, हीरा आदि के रूप में मंगल भेंट, उपहार की बहुमूल्य वस्तुएँ आने लगीं। घर–घर सोहर होने लगे और मंगल बधाई बजने लगी। पुरवासियों की तो ठट्ट की ठट्ट भीड़ यत्र–तत्र सर्वत्र लग उठी। सब

लोग आनंद में डूबे हुए डोल फिर रहे हैं। किसी को अपने तन–बदन की सुधि नहीं रह गई है। मागधों, बंदीजनों, सूतों को हाथी, घोड़ा, गाय, वस्त्र सभी कुछ लुटा दिया गया। वे प्रसन्न होकर आशीष दिए जा रहे हैं–रण में धैर्य धारण करनेवाले युद्धवीर राम चिंरजीवी हों।''[32]

पेरियाल्वार ने राम के पदों का वर्णन करते हुए सीता और हनुमान की अशोक वाटिका में भेंट का चित्रण किया है। सीता के संदेह दूर करने के लिए हनुमान उन्हें तरह तरह के अभिज्ञान बता रहे हैं, जो उन्हें राम जी ने बताए हैं

चित्तिर– कूडत्तु इरूप्प–च्

चिरू–काक्कै मुलै तीण्ड

अत्तिरमें कोण्डु एरिय

अनैत्तु उलहुम् तिरिन्दु ओडि,

वित्तहने! इरामाओ!

निन्– अपयम् एन्रू अळैप्प

अत्तिरमे अदन् कण्णै

अरूतदुम् ओट् अडैयाळम्।[33]

'चित्रकुट में (आप लोगों के रहते समय) क्षुद्र काक ने (आप के) स्तन को छुआ। राम ने एक अस्त्र ले कर फेंका। (उससे भयभीत) वह काक सभी लोकों में भाग घूम कर (कहीं रक्षा न पाने से राम के चरण में गिर कर) पुकारा–''विदग्ध! राम! तुम्हारी दुहाई! हाय!'' उस अस्त्र ने ही उसके एक नेत्र को निकाल डाला। यह भी एक अभिज्ञान है।'[34]

हनुमान सीता जी को तरह–तरह के अभिज्ञान करा रहे हैं। जिसमें उनके विवाह के समय धनुष भंग का वर्णन एवं परशुराम द्वारा मार्ग रोकना, कैकेयी द्वारा वरों की याचना करना, लक्ष्मण सहित राम का दण्डकारण्य जाना। शृंगिबेरपुर में गुह के संग राम की मित्रता, चित्रकूट

में राम–भरत मिलन का वर्णन, काक की दृष्टता, सीता का हिरण पर मोहित होना तथा राम का धनुष ग्रहण कर उसके पीछे निकलना तथा सीता को वहाँ अकेली छोड़कर लक्ष्मण का पीछे से निकलना आदि का वर्णन कर सीता को विश्वास दिला रहे हैं कि वह राम का सेवक है।

सूरसागर में सीता, हनुमान को यह संदेश राम तक पहुँचाने के लिए कह रहीं हैं–

कहियौ बच्छ, सँदेसौ इतनौ, जब हम वै इक थान।

सोवत काग छुयौ तन मेरौ, बरहहिं कीनौ बान।

फोडयौ नयन, काग नहिं छाँड़यौ सुरपति के बिदमान!

अब वह कोप कहाँ रघुनंदन, दससिर–बेर बिलान?[35]

सूरसागर में सीता जी, हनुमान जी से कहती हैं, प्रभु से मेरा बस इतना संदेशा कहना कि जब राम और मैं चित्रकूट में स्फिटिक शिला पर बैठे थे। तो कौवे (इंद्रपुत्र जयंत) ने सोते समय मेरे शरीर को छू लिया था। तो आपने इंद्र के समझाने पर भी उसकी आँख फोड़ दी थी। अब रावण की बार में उनका वह क्रोध कहाँ मर खप गया।

वाल्मीकी रामायण में यह वृतांत सीता हनुमान से कहती हैं। सूरसागर में भी ऐसा ही वर्णन मिलता है। किंतु आल्वार के पदों में राम से सुनकर हनुमान इस वृतांत को सीता जी से कहते हैं।

'सूरसागर' के लंका कांड में सूरदास ने श्रीरामचंद्र के अलौकिक स्वरूप का चित्रण किया है, जैसे पेरियाल्वार के पदों में मिलता है। सीता का पता पाकर उस समय का अद्‌भुत चित्रण सूर ने किया है,

सीय–सुधि सुनत रघुबीर धाए।

चले तब लखन, सुग्रीव, अंगद, हनू, जामवँत, नील, नल सबै आए।

भूमि अति डगमगी, जोगिनी सुनि जगी, सहस–फन सेस कौ सीस काँप्यौ।

कटक अगिनित जुर्‌यौ, लंक खरभर पर्‌यौ, सूर कौ तेज धर–धूरि–ढाँप्यौ।

जलधि–तट आइ, रघुराइ ठाढ़े भए, रिच्छ–कपि गरजि कै धुनि सुनायौ।

'सूर' रघुनाथ चितए हनूमान–दिसि, आइ तिन तुरत ही सीस नायौ।।[36]

सिंधु–तट–वास के समय जब राम को सीता का पता मालूम हो जाता है। उस समय उनकी दशा और प्रकृति की दशा का चित्रण सूरदास करते हैं, 'सीता का पता पाकर रघुवीर दौड़ पड़े। उनके साथ लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद, हनुमान, जामवंत, नल, नील, सभी दौड़ पड़े। उनके दौड़ने से पृथ्वी डगमगाने लगी। योगिनियाँ कोलाहल सुनकर जाग गईं। एक हजार फन वाले शेषनाग का सिर काँपने लगा। रघुराज आकर समुद्र के किनारे खड़े हो गए। बानर भालुओं ने घोर गर्जना करते हुए आकाश को गुँजा दिया। रघुनाथ जी ने हनुमान की ओर देखा। उन्होंने तुरंत वहाँ आकर उन्हें सिर झुकाया।'[37]

आल्वारों को रामकाव्य का प्रर्वतक माना जा सकता है। तमिल भाषा में आल्वारों के पूर्व उपलब्ध उल्लेख राम–काव्य के मात्र छोटे–मोटे प्रसंगों से संबंधित हैं और उन सबका संकलन करने पर भी उनमें किसी प्रबंधात्मकता स्थापित करना कठिन है। वे प्रसंग अधिकतर किसी घटना विशेष की पुष्टि में या किसी ललित भाव की अभिव्यक्ति में उल्लिखित हैं। उन प्रसंगों के प्रणेताओं का उद्‌देश्य कदापि रामावतार की मर्यादोपासना का यशोगान करना नहीं रहा।

5.4 पेरियाल्वार के पदों में सांस्कृतिक मान्यताएं

कोई भी रचनाकार जब किसी रचना में प्रवृत्त होता है। तब वहाँ की परिस्थितियों को लेकर ही रचना करता है। उसकी रचनाओं में उसके निकटतम वातावरण, आचरण, सामाजिक व्यवस्था, परिवेश आदि सभी का सम्मिलन स्वतः हो जाता है। संत पेरियाल्वार ने कृष्ण की लीलाओं को अपनी रचना का आधार बनाया है। यह स्वयं माता यशोदा बने हैं और

स्वंय यशोदा की ही भांति कृष्णानुभव कर रहे हैं। उनकी रचनाओं में वहाँ की वैभवशाली संस्कृति का वर्णन मिलता है।

पेरियाल्वार ने कृष्ण की बाल लीलाओं का माता यशोदा बनकर वर्णन किया है। आल्वार ने चाहा कि वह स्वंय कृष्णानुभव करें। लेकिन यह नहीं हो पाया। उन्होंने गोपी बनकर भी कृष्णानुभव की कामना की लेकिन उनकी इस कामना की भी पूर्ति नहीं हुई। उनके पदों में एक माता की पुत्री विषयक चिंता देखने को मिलती है। वह एक गोपी की माता के रूप में भांति–भांति की चिंताएं करते नजर आते हैं। कारण यह भी हो सकता है कि उनकी पुत्री आण्डाल कृष्ण से प्रेम करती थीं। पदों के अध्ययन से ऐसा अनुभव होता है कि उनके पुत्री संबंधी चिंता के पद अपनी पुत्री आण्डाल के लिए ही लिखे गए हैं। माता की भांति उन्हें हमेशा डर बना रहता है कि पुत्री अपने प्रियतम से मिलने गई है। कहीं समाज में वह कलंकित न हो जाए।

पेरुप् पेरूत् कण्णालकळ् चेय्तु पेणि नम् इल्लत्तुळ्ळे

इरुत्तुवान् एण्णि नामिरुक्क इवळुम् ओन्रु एण्णुकिन्राळ्

मरुत्तुवम् पतम् नींकिनाळ् एन्नुम् वातें पडुवतन् मुन्

ओरुप्पडुत्तिडुमिन् इवहे उलकळन्तान् इडैक्कै।।[36]

'गोप कन्या की माँ का कहना है–हम सोचते हैं कि मेरी इस बेटी के, समय–समय पर प्यार से शुभ सांस्कारिक कृत्य कराये जायें और इस प्रकार इसे घर के भीतर ही सुरक्षित रखा जाय। किंतु यह लड़की तो कुछ और ही सोचती है और कर बैठती है (कृष्ण के ध्यान में इधर–उधर चली जाती है।) उस स्थिति में सामाजिक अपवाद की संभावना तो है। अतः बन्धुओं ने कहा कि जैसे वैद्य अपने द्वारा बनाये गये औषध की बराबर जांच किये बिना उपयोग करा देता है और रोगी पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है, वैसे ही इस कन्या की स्थिति पर ध्यान न दिये जाने पर बदनामी का प्रभाव पड़ सकता है। ऐसा होने से पहले ही इस कन्या को उसके

प्रिय स्वामी, निखिल ब्रह्माण्ड को अपने पगों से नाप लेने वाले भगवान नारायण अर्थात् उनके अवतार–भूत कृष्ण के पास ले जाकर छोड़ दिया जाये।''[37]

सामाजिक मान्यताएं, समाज विषयक चिंताएं आल्वार के पदों में दृष्टिगत होती है। यह स्वाभाविक चिंताएं जो प्रत्येक कन्या के प्रति उसके माता–पिता की बनी रहती है।

पेरियाल्वार गोपी की माँ बनकर कृष्ण के साथ अपनी बेटी के सामाजिक रीतिरिवाजों के अनुसार विवाह का वर्णन करते हैं

कुमरि मणम् चेय्तु कोण्डु कोलम् चेय्तु इल्लत्तु इरुत्ति

तमरुम् पिररुम् अरियत् तामोतरर्केन्रु चाट्रि

अमरर् पतियुडैत् तेबि अरशणियै वषिपट्टु

तुमिलम् एषप् परै कोट्टित् तोरणम् नाट्टिडुंकोलो![38]

पेरियाल्वार का ममतामयी हृदय अपनी पुत्री की श्रीकृष्ण के साथ विवाह की कल्पना कर आनंदित हो रहा है 'समाज में मेरी कन्या का नानाविध मांगलिक उत्सवों के बीच वस्त्राभूषणों से अलंकरण कर, उसे विवाह मंडप में बिठाकर बंधु जनों और अन्य लोगों के बीच क्या यह घोषणा की जायेगी कि दामोदर कृष्ण के लिए इसका कन्यादान किया गया। बाद में देवादि देव कृष्ण की पत्नी के रूप में मेरी कन्या पीपल की शाखा की विधिवत् परिक्रमा करेगी; नगाड़े की ऊँची ध्वनि के बीच सारे नगर को तोरणों से सजाकर उस अलंकृत एवं मधुर वातावरण में क्या मेरी कन्या का कृष्ण के साथ सामाजिक नियमों के अनुसार परिणय संपन्न होगा? सामाजिक अपवाद की जगह, सामाजिक स्वीकृति के साथ कृष्ण के साथ कृष्ण के साथ अपनी कन्या के शुभ एवं मांगलिक विवाह की परिकल्पना कर माँ का हृदय अत्यंत प्रसन्न होता है।'[39]

गोप कन्या की माता अपनी वेदना को पड़ोस में रहने वाली स्त्री के साथ बाँट रही है।

कुडियिल् पिरन्तवर् चेय्युम् कुणम् चेय्तिनल् अन्तो!

नडैयोन्रुम् चेय्तिलन् नंकाय् नंदगोपन् मकन् कण्णन्

इडैयिरु पालुम् वणंक इळैत्तु इळैत्तु एन् मकळ् एंगि

कडै कयिरे पट्रि वांगिक् कै तषुम्पेरिडुडङ् कोलो?[40]

पडोसिन से गोप कन्या की माता कह रही है, ''हे देवि! नन्दगोप का पुत्र भले ही उच्च कुल में जन्मा हो; फिर भी उच्च कुलवालों के गुणों में से एक भी अच्छा गुण उसने ग्रहण नहीं किया है। उसका व्यवहार भी विश्व के उत्तम लोगों के अनुरूप बिल्कुल नहीं है। (वह मेरी बेटी को ले तो गया; लेकिन उसके साथ उच्च कुलवालों तथा उत्तम लोगों की तरह व्यवहार नहीं किया है। जहाँ मेरी बेटी को रानी की तरह रखना चाहिये था, उसने उसे दासी की तरह दही मथने के काम में लगा दिया है)।[41]

हाय हाय! मेरी बेटी की कमर दोनों तरफ़ दही मथते–मथते लचक जाती है; तब वह सांस रोके हुए मथ नहीं पाती; परेशान होकर दुर्बल हो जाती है; फिर मथने में काम आनेवाली रस्सी को ज़ोर से खींचने लगती है; तब उसके कोमल हाथों में गहरा घाव हो जाता है।''[42]

आल्वारों की स्थापना है कि जो लोग भगवान नारायण का स्मरण नहीं करते हैं, वे भूमि के लिए भार हैं; साथ ही वे लोग अज्ञान तम में फँसे रहते हैं–

आमैयिन् मुतुकत्तिडैक् कुति कोण्डु तूमलर् चाडिप् पोय्

तीमै चेय्तु इळवाळै कळ् विहेयाडु नीर्त् तिरुक् कोट्टियूर्

नेमि चेर् तड़ कैयिनानै निनैप्पिला वलि नेंचुडै

पूमि पारंकळ् उण्णुम् चोट्रिनै वांगिप् पुल्लैत् तिणिमिने।।[43]

'तिरुक् कोट्टियूर् क्षेत्र ऐसे विविध सरोवरों से युक्त है, जहाँ चाँद जैसी चमकती बड़ी–बड़ी मछलियों कछुओं की पीठ पर उछलती–कूदती रहती हैं; अच्छे–अच्छे पुष्पों को रौंदती–कुचलती हैं और छोटे–छोटे जल जीवों को भगा देती हैं।

इस पावन तीर्थ में सुदर्शन चक्रधारी भगवान नारायण विराजमान हैं। जो लोग उनका यानी भगवान नारायण का स्मरण एवं ध्यान नहीं करते हैं वे लोग कठिन हृदयवाले अर्थात् संगदिल होते हैं। ऐसे लोगों का जीवन निरर्थक है और भूमि के लिए भार जैसा है। इस तरह के लोग जो अन्न खाते हैं उसे हटाकर उनको घास खिला दीजिये। यह माना हुआ सत्य है कि संसार में ज्ञानियों को भात खाना है और अज्ञानियों को घास आदि ही खाने होंगे। जो लोग भगवान नारायण का स्मरणा और ध्यान नहीं करते हैं वे अज्ञानी हैं; अतः उनको भात नहीं, घास आदि ही खाने होंगे।'[44]

प्रस्तुत पद में आल्वार का आक्रोश व्यक्त हुआ है। पेरियाल्वार भगवान नाम स्मरण के बारे में जोर देकर कहते हैं कि मनुष्य को समय रहते भगवान नाम स्मरण करना चाहिए। मृत्यु के समय यम किंकरों से बचने के लिए मनुष्य को गोविन्द का नाम संकीर्तन करना चाहिए।

वायोरु पक्कम् वांगि वलिप्प वार्न्त नीर् कुषि़क कण्कळ् मिषट्र

तायोरु पक्कम् तन्तैयोरु पक्कम् तारमुम् ओरु पक्कम् अलट्र

ती ओरु पक्कम् चेर्वतन् मुन्नम् चेंकण मालोडुम चिक्केनच् चुट्रम्

आय् ओरु पक्कम् निर्कवल्लार्कु अरव दंडत्तिल उय्यलुम् आमे।।[45]

'मृत्यु से पहले की हालत क्या होती है? देखिये। वायु विकार से मुँह वक्रित हो जाता है; अश्रुसिक्त आंखें पथरा जाती हैं और भीतर धंसी रहती हैं; मृत शरीर के एक तरफ माँ, दूसरी तरफ पिता और पत्नी फूट–फूटकर रोते रहते हैं। ऐसे संदर्भ में प्राणों के चले जाने से मृत शरीर को जलाने के लिए उसमें आग लगायी जायेगी।

ऐसी स्थिति में शरीर के सशक्त रहते भगवद् ध्यान में समय का सदुपयोग किये बिना जीवन को व्यर्थ करनेवालों को चरम काल में यम किंकरों का दण्ड भुगतना पड़ता। किंतु शरीर के स्वस्थ रहते कमलनयन भगवान नारायण को आप्त बंधु के रूप में स्वीकार करते हुए जो लोग उन्हींके ध्यान में मग्न रहेंगे उनको यम–दण्ड का शिकार नहीं होना पड़ेगा।'[46]

पेरियाल्वार के पदों में दक्षिण संस्कृति के दर्शन होते हैं। तमिलनाडु को मंदिरों का प्रदेश कहा जाता है। पेरियाल्वार के दार्शनिक पदों में श्रीमन्नारायण को ही परब्रह्म मानकर उनके शक्तिशाली स्वरूप का विवेचन किया गया है।

5.5 अष्टछाप कवि सूरदास की सांस्कृतिक मान्यताएं

साधना और संस्कृति का घनिष्ठ संबंध होता है। साधना विशुद्ध रूप से व्यक्तिगत और संस्कृति सामान्य रूप से सामाजिक होती हुई भी एक–दूसरे को बहुत हद तक प्रभावित करती है। यह स्वीकार करना पड़ेगा कि कवि के निर्माण में उस युग की स्थितियाँ भी उपादान रहती हैं। हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ भक्त कवि सूरदास है। सामाजिक भूमि सूर को सर्वाधिक प्यारी है। सूर की सांस्कृतिक मान्यताएं उन्हें लोक से जोड़ती हैं। सूर के काव्य की पृष्ठभूमि ब्रज प्रदेश है। ब्रज प्रदेश प्राचीन काल से ही संस्कृति का केंद्र रहा है। चौदहवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक कृष्ण भक्ति की धारा जो अबाध गति से प्रवाहित हुई। उसने इस समय के कवियों को भी प्रभावित किया। सूरदास ब्रज संस्कृति एवं उसकी मान्यताओं को विस्तार देने वाले अग्रगण्य कवि हैं। ''सूर के समय में तो ब्रजवासी तमोगुण से शून्य, सात्विक स्वभाव के थे ही, उनसे पूर्व भी हुऐनसांग के शब्दों में वह कोमल स्वभाव वाले तथा दूसरों के साथ आदरणीय व्यवहार करने वाले थे। वे परोपकारी, तत्त्वज्ञान के अध्येता और विद्या के प्रति सम्मान का भाव रखते थे। ब्रज की सात्विक संस्कृति ब्रजवासियों के सात्विक स्वभाव में परिलक्षित होती थी। सूरदास के सूरसागर में इसी संस्कृति के दर्शन होते हैं।''[47] सूर के काव्य में प्रकृति के सहज नैसर्गिक और विशद चित्र बहुतायत में मिलते हैं। कृष्ण लीलाओं की पृष्ठभूमि में प्रकृति चित्रण और भी आकर्षक हो गया है। प्रकृति में भी वह विरह की तलाश करते हैं और प्रीति के बंधन को दुखदायी मानते हैं

प्रीति करि काहू सुख न लहयौ।

प्रीति पतंग करी पावक सौं, आपै प्रान दहयौ।

अलि–सुत प्रीति करी जल–सुत सौं, संपुट माँझ गहयौ।

सारँग प्रीति करी जु नाद सौं, सन्मुख बान सहयौ।

हम जो प्रीति करी माधव सौं, चलन न कछू कहयौ।

'सूरदास' प्रभु बिनु दुख पावत, नैनन नीर बहयौ।।[48]

सूरदास के पदों से स्पष्ट होता है कि वह समाज से अनभिज्ञ कवि नहीं थे। डॉ. प्रेमशंकर, 'भक्तिकाव्य का समाजदर्शन' पुस्तक में कहते हैं, ''प्रेम का विकास सूरदास में सहज प्रक्रिया से होता है, जिसमें माखन–प्रसंग, गो–दोहन, गो–चारण आदि आते हैं और आगे चलकर मुरली–वादन, रास–प्रसंग हैं। सूरदास में इन लीलाओं को कृषक–चरवाहा संस्कृति से संबद्ध करके देखना उचित होगा। यहाँ ब्रजमंडल अपनी प्राकृतिक सुषमा और संस्कारों में उपस्थित है जिससे इस आरोप का खंडन होता है कि सूर में जीवन–यथार्थ के संपर्क नहीं है। यथार्थ के कई परिदृश्य होते हैं, जिनमें एक को कबीर ने ग्रहण किया और दूसरे को जायसी–सूर आदि कवियों ने।''[49] तत्कालीन सती प्रथा और युद्ध को भी सूर ने अपने पदों में दर्शाया है–

लोग सब कहत सयानी बातैं।

कहतहिँ सुगम, करत नहिँ आवैं, सोचि रहत हैं तातैं।।

कहति आगि, चंदन सी सीरी, सती जानि उमहै।

समाचार ताते अरू सीरे, पीछैं जाइ लहैं।।

कहत सबै संग्राम सुगम अति, कुसुम लता करबार।

'सूरदास' सिर देत सूरमा, साइ जानै ब्यौहार।।[50]

प्रस्तुत पद में गोपी कह रही हैं– सभी लोग चतुराई भरी बातें कहते हैं। ये बातें कहने में बड़ी सुगम होती हैं लेकिन करने में बड़ी कठिन होती हैं। इसलिए हम सोच–सोचकर रह जाती हैं। लोग कहते हैं कि सती के लिए आग चंदन सी शीतल हो जाती है। किंतु इसका पता तो उस विधवा स्त्री को तब चलता है। जब वह पति के शव के साथ

लेट जाती है। उसकी दाहकता का पता तो उसे तब चलता है। इसी प्रकार लोग कहते हैं कि युद्ध अति सुगम हैं यहाँ कृपाण भी कुसुम लता सी प्रतीत होती है। किंतु यह बात तो वह योद्धा ही जानता है कि यह फूलों के समान है या सिर काटने वाली। असली व्यहार तो वही जानता है। इसी प्रकार विरह व्यथा को समझना हर किसी के बस की बात नहीं है। उसे सहज ही मान लेते हैं।

रामचंद्र शुक्ल, 'त्रिवेणी' में सूरदास की प्रेम संयोग एवं वियोग पक्ष की आलोचना करते हुए कहते हैं, ''लोकसंघर्ष से उत्पन्न विविध व्यापरों की योजना सूर का उद्देश्य नहीं है, उनकी रचना जीवन की अनेकरूपता की ओर नहीं गई है, बालक्रीडा, प्रेम के रंग रहस्य और उसकी अतृप्त वासना तक ही रह गई है। जीवन की गम्भीर समस्याओं से तटस्थ रहने के कारण उसमें यह वस्तुगाम्भीर्य नहीं है, जो गोस्वामी की रचना में है। परिस्थिति की गम्भीरता के अभाव से गोपियों के वियोग में भी वह गम्भीरता नहीं दिखाई पड़ती, जो सीता के वियोग में है। उनका वियोग खाली बैठे का काम–सा दिखाई पड़ता है। सीता अपने प्रिय से वियुक्त होकर कई सौ कोस दूसरे द्वीप में राक्षसों के बीच पड़ी हुई थीं। गोपियों के गोपाल केवल दो–चार कोस दूर एक नगर में राजसुख भोग रहे थे। सूर का वियोगवर्णन वर्णन के लिए ही है। परिस्थिति के अनुरोध से नहीं।''[51] शुक्ल जी, सूर की गोपियों के विरह को खाली बैठे का काम बताते हैं। किंतु कृष्ण की गोपियाँ कृष्ण से दो–चार कोस दूर है, चाहें तो दिन में दो बार उनके दर्शन कर सकती हैं। लेकिन कृष्ण की गोपियों में एक मान है। वह विरह में तड़पती रहती है, किंतु कृष्ण से मिलने नहीं जाती। सूर को गोपियों के इसी मान पर अभिमान है। 'सूर–साहित्य' पुस्तक में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, ''राधिका का प्रेम उन्हें पूर्णता तक पहुँचाने के लिए है, बोझ होने के लिए नहीं। यदि उन्हें जरूरत होगी, वे खुद आयेंगे। पर राधिका अपने एकान्त–रक्षित प्रेम निधि को सहज ही नहीं खोल देगी। वे आवें, अगर उनमें कोई अपूर्णता रह गयी हो; वे न आवें, अगर वे अपने को पूर्ण समझते हों; राधिका का तो एक ही काम है प्रेम करना, विरह की आग में जलना और मिलन की आशा में जीना। वह स्वंय नहीं जायेंगी।''[52] सूर का प्रेम चित्रण अपने आप में अनूठा है। नारी में स्वाभिमान की भावना को लक्षित करते उनके पदों में तत्कालीन नारी का चित्रण होता

है। जो स्वाभिमानी है। उसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। सूर की गोपियाँ निर्गुण योग में अपना मन रमाने को बिल्कुल तैयार नहीं है

जोग ठगौरी व्रज न बिकैहै।

मूरी के पातनि के बदलैं, कौ मुक्ताहल दैहै।

यह ब्यौपार तुम्हारौ ऊधौ, ऐसौं ही धर्‌यौ रैहै।

जिन पै तैं लै आए ऊधौ, तिनहिं के पेट समैहै।

दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी, को अपने मुख खैहै।

गुन करि मोही 'सूर' साँवरैं, को निरगुन निरबैहै।।[53]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल, 'त्रिवेणी' में कहते हैं, ''सूर के प्रेम की उत्पत्ति में रूपलिप्सा और साहचर्य दोनों का योग है। बाल क्रीड़ा के सखा–सखी आगे चलकर यौवन क्रीड़ा के सखा–सखी हो जाते हैं। गोपियों ने उद्धव से साफ कहा–लरिकाई को प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटे? केवल एक साथ रहते–रहते दो प्राणियों में स्वभावतः प्रेम हो जाता है। कृष्ण एक तो बाल्यवस्था से ही गोपियों के बीच रहे, दूसरे सुंदरता में भी अद्वितीय थे अतः गोपियों के प्रेम का क्रमशः विकास दो प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव से होने के कारण बहुत ही स्वाभाविक प्रतीत होते है। बालक्रीड़ा इस प्रकार यौवन क्रीडा के रूप में परिणत होती गई है कि संधि का पता ही नहीं चलता।''[54] सूर ने प्रेम का स्वच्छंद चित्रण किया है। 'अनभै सांचा' पुस्तक में मैनेजर पाण्डेय सूर के प्रेम की विशेषता बताते हुए कहते हैं, ''सूर का प्रेम शास्त्र और लोक की रूढ़ियों से एकदम स्वतंत्र है। वह विधिनिषेध से मुक्त मानवीय मनोकामना का मूर्त रूप है। ऐसा प्रेम किसी रूढ़िबद्ध समाज में ऐसा प्रेम अधिक से अधिक एक आकांक्षा, कल्पना या सपना हो सकता है। प्रेम की स्वतंत्रता के लिए रूढ़िमुक्त समाज जरूरी है। सूर की विशेषता यह है कि उन्होंने स्वच्छंद समाज में स्वच्छंद प्रेम का चित्रण किया है। उस युग में ऐसे समाज और प्रेम का चित्रण तत्कालीन समाज की सीमाओं को लाँघकर स्वतंत्र प्रेम और प्रेम की मानवीय आकांक्षा के अनुकूल कल्पनालोक का सृजन है।''[50] सूर के प्रेम का स्वच्छंद

चित्रण किया है। किंतु प्रेम का चित्रण अश्लील नहीं है। सूर की गोपियाँ कृष्ण से उन्मुक्त प्रेम करती है और उनका ऐसा अगाध प्रेम हैं कि वह राजसत्ता को खारिज करती हैं।

भारतीय संस्कृति की मान्यताओं में मैनेजर पाण्डेय कहते हैं, ''भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार समाज व्यवस्था की एक अत्यंत आवश्यक इकाई है। बालक परिवार में सृष्टि के विकासक्रम की एक नई कडी है। भारत के प्राचीन सामाजिक दार्शनिकों ने धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से संतान की महत्ता प्रतिपादित की है। बालक माता–पिता के दांपत्य प्रेम का फल है। माता–पिता के पारस्परिक अस्तित्वबोध और अस्तित्वविलयन के फलस्वरूप नवीन सत्ता का अभ्युदय संतान के रूप में होता है, इसलिए जीवन को समग्रता से ग्रहण करने वाले कवि या कलाकार के लिए वात्सल्य भाव की अनुभूति और अभिव्यक्ति आवश्यक है।''[51] रामस्वरूप चतुर्वेदी अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' में कहते हैं, ''जीवन के प्रति अनुराग जगाना परिवार के भावात्मक आकर्षणों का उद्‌घाटन करके ही संभव था। और यही सूरदास ने किया है। फिर यह पारिवारिकता, गृहस्थ जीवन और गोचारण का वातावरण मिल कर कृष्ण तथा राधा के प्रणय–जीवन का अनिवार्य संदर्भ बनते हैं।''[52] सूरदास के पदों में पारिवारिक एवं सामाजिक पदों की बहुलता मिलती है। सूर में पारिवारिक जीवन की प्रामाणिकता और रसमयता बढ़ाने वाला एक तत्व और है–गोपालन, जिसमें कृष्ण होते हैं गोपाल, आगे चलकर दुहरे अर्थ में। बालक और गाय गृहस्थ जीवन के दो अनिवार्य अंग हैं, भावात्मक और व्यावहारिक इन दोनों स्तरों पर पारिवारिक जीवन और गोचारण संस्कृति का चित्रण मिलता है।

सूर के यहाँ निर्गुण उपासना का विरोध मिलता है। हरबंसलाल शर्मा के अनुसार, ''निर्गुण उपासना से सूरदास का मतलब शायद कबीरदास आदि की साधना से है। सूरदास इसको भी सगुण उपासना के सामने फीका समझते हैं। इन निर्गुण उपासना के साधकों का कहना था कि त्रिगुणात्मक वेष त्याग करके पूर्ण ब्रह्म का ध्यान करो। भगवान् का न तो नाम है, न रूप। उनका कुल भी नहीं, वर्ण भी नहीं। न कोई माता–पिता है, न कोई स्त्री है। वे त्रिगुणातीत है। यह संसार मिथ्या है। ईश्वर को सुख भी नहीं होता और दुःख भी नहीं। आत्मा ही ब्रह्म है, वह घट–घट व्यापक है। भगवान् अविगत हैं, अविनाशी हैं, पूर्ण

हैं–इस निर्गुण ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती।''[53] सूरदास ने गोपियों के माध्यम से इसका घोर विरोध किया है। सूरदास सगुण उपासना की सरलता का प्रचार और योग का विरोध करते है।

निरगुन कौन देस कौ वासी?

मधुकर, कहि समुझाइ सौंह दै, बूझतिँ साँच, न हाँसि।

को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी।

कैसे बरन, भेष है कैसौ, किहिँ रस मैं अभिलाषी।

पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जो रे करैगौ गाँसी।

सुनत मौन ह्वै रहह्यौ बावरौ, 'सूर' सबै मति नासी।[54]

सूरदास के काव्य में किसान जीवन के यथार्थ का चित्रण किया गया है। 'भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य सूरदास' पुस्तक में मैनेजर पाण्डेय कहते हैं, ''सूर के काव्य में जिस किसान जीवन का चित्रण है, उसका एक विशेष सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भ है। वह संदर्भ सामंती व्यवस्था का है, जिसके भीतर किसान जीवन के अनुभवों का स्वरूप बना है। सूर की विशेषता यह है कि उन्होंने सामंती व्यवस्था के संदर्भ के साथ किसान जीवन के अनुभवों का चित्रण किया है। उसमें सामंती व्यवस्था के अत्याचार और किसानों की यातना को मूर्त और इंद्रियग्राह्य बनाने के लिए रूपक का सहारा लिया गया है। एक रूपक में किसानों की निर्धनता के कारण लगान देने में असमर्थता, सामंतों की लूट और उनके कपटी कर्मचारियों के अनाचार का वर्णन किया है।''[55] सूर ने ग्रामीण जीवन के विविध पक्षों को उठाया है। तत्कालीन ग्रामीण जीवन के पिछडेपन के मूल में तत्कालीन दरबारी संस्कृति का आकर्षण था जिस पर सूर ने जमकर प्रहार किया है। तत्कालीन सामंती व्यवस्था का चित्रण है। स्त्रियों की स्वतंत्रता का चित्रण मिलता है।

राजमोला बोरा पुस्तक 'भारतीय भक्ति साहित्य' में कहते हैं, ''व्यक्ति रूप में श्रीकृष्ण जितने महान हैं उसकी थाह पाना परम ज्ञानियों के लिए भी कठिन है किंतु सूर ने ऐसे पुरुषोत्तम को सभी प्रकार के मानवीय व्यवहार करते दिखलाए हैं। वह शिशु रूप, बालरूप, किशोर रूप में हम सबका रंजन करते हैं और उनके साहचर्य के कारण सबको सुख प्राप्त होता है। श्रीकृष्ण को ब्रह्म सनातन मानें (माना गया है) तो वे ब्रह्म सनातन व्यक्ति रूप में इतने ऊँचे हैं कि उनकी अनुभूति के लिए (रहस्यात्मक अनुभूति के लिए) उनके सदृश होना पड़ेगा। ऐसा समाज में सब व्यक्तियों के लिए कठिन है। अतः प्रभु स्वयं समाज से जुड़ने के लिए समाज के सामान्य स्तर तक उतर आए हैं। व्यक्ति का इस स्तर से समाज से जुड़ना समाज के कल्याण के लिए है। इस जुड़ने में उनके मानवीय व्यवहारों को लीला कहा गया है। प्रभु हम सबकी तरह व्यवहार करें, तो वह सब लीला है।''[56] सूर के काव्य में आध्यात्मिकता आदि से अंत तक केंद्र में होने के बावजूद उनका व्यक्तित्व सामप्रदायिक नहीं कहा जा सकता। सूर न तो धर्म प्रवर्तक थे और न ही धर्म प्रचारक। वे केवल और केवल कृष्ण थे और साम्प्रदायिकता की भावना से अछूते थे।

5.6 पेरियाल्वार एवं सूरदास की काव्य शैली

डॉ. पी. जयरामन आल्वार काव्य की छंद एवं संगीत योजना के विषय में कहते हैं, ''आलवार काव्य में शास्त्रीय तथा लोक संगीत की विभिन्न शैलियों तथा लय–ताल संयुक्त राग–रागनियों का भी समावेश हुआ है जिससे अभिव्यक्ति प्रभावोत्पादक, लोकरंजक, मार्मिक तथा भावानुकूल हो सकी है। आलवार काव्य में भैरवी, सहाना, भूपाल, धनाश्री, टोड़ी, आसावारी आदि राग–रागिनियों, आदि ताल, रूपक ताल, त्रिपुट ताल आदि तालों तथा लोरी गीत (तालाट्टु), चंद्र निमंत्रण गीत (अम्बुलि पाट्टु) आदि बालजीवन से संबंधित विभिन्न लोकगीत शैलियों का प्रयोग हुआ है। साथ ही, इन संगीतमय पदों में काव्य–शास्त्रीय छंदों का भी पालन किया गया है।''[57]

भाषा और भाव की दृष्टि से सूरदास अत्यंत उच्च कोटि के कवि हैं। उन्होंने ब्रज भाषा में मुक्त काव्य और गीतितत्त्व के सहारे कृष्ण काव्य की एक विशेष परम्परा को जन्म दिया। वास्तव में ब्रज भाषा को साहित्यिक रूप सूरदास ने ही दिया। सूरदास की रचना में माधुर्य गुण की प्रधानता है। उन्होंने मानव हृदय के सूक्ष्म से भी सूक्ष्म भावों का विलक्षण चित्रण किया है। सूरदास के काव्य में प्रेम और वात्सल्य दोनों समान रूप से उपस्थित है। प्रकृति और उसका सौन्दर्य काव्य में प्रमुख है। उन्होंने भावों को स्पष्ट करने के लिए और उन्हें शक्ति प्रदान करने के लिए रसों और अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमा, उत्प्रेक्षा, उदाहरण, दृष्टान्त, लोकोक्ति, अतिश्योक्ति, रूपक आदि अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त सूरदास ने रूपमाला, गीतिका, विष्णुपद, सरसी, सार, वीर, लावनी, चंद्र, हरिप्रिया, हंसाल, मत, सवैया, सुखदा, कुण्डल आदि छंदों का भी प्रयोग किया है। लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखते हैं, ''सूर ने बहुत नहीं कहा, किंतु, जो कुछ कहा है उसे चरम सीमा तक पहुँचा दिया है। उन्होंने काव्य के लगभग सभी सिद्धांतों का अत्यंत कौशल के साथा पालन किया है। श्रृंगार के सुंदर निरूपण के अतिरिक्त उनकी रचना में शांत के साथ–साथ हास्य और करुण रस भी मिलते है। साथ ही विरह की एकादश दशाएं भी मिलती है।''[58] सूर–साहित्य में उच्चकोटि की संगीतात्मकता के दर्शन होते हैं। काव्य में अलंकारों का प्रयोग भी बड़े सहज रूप में हुआ है। यद्यपि उपमा, रूपक, अलंकारों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है, किंतु उसमें कृत्रिमता या दुरूहता कहीं दिखाई नहीं देती।

निष्कर्षः कहा जा सकता है। आल्वार संत पेरियाल्वार की वही परिपाटी नहीं रही है, जो सूरदास के काव्य में है। सूरदास सामाजिक व्यवस्था के प्रति अधिक जागरूक दिखाई पड़ते हैं। आल्वार संतों एवं अष्टछाप कवियों की काव्यशास्त्रीय परम्परा से चले आने वाले छन्दों का अपनी–अपनी रचनाओं में प्रयोग किया है। चूंकि ये छंद हर भाषा के अलग–अलग होते हैं और उनमें समानता की कोई संभावना नहीं होती। अतः उन पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने का कोई औचित्य नहीं है। आल्वार संत और अष्टछाप कवि दोनों के काव्य में संगीतबद्धता और गेयता है।

संदर्भ सूची–

1. (प्रस्तुतकर्ता) डॉ. पी. जयरामन; संत वाणी, खण्ड–5, प्रथम सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–19.
2. मु. वरदराजन; तमिल साहित्य का इतिहास, अनुवादकः एम.शेषन्, तमिल साहित्य का इतिहास, प्रथम सं. 1994, साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35, फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली–110001, पृ.–120.
3. सूरसागर सटीक, खण्ड–1, संपादन एवं अनुवाद हरदेव बाहरी, राजेन्द्र कुमार, सं. 2010, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–2.
4. (प्रस्तुतकर्ता) डॉ. पी. जयरामन; संत वाणी, खण्ड–5, प्रथम सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–20.
5. वही, पृ.–20.
6. वही, पृ.–35.
7. वही, पृ.–35.
8. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–1, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–164
9. पेरियाल्वार तिरुमोलि (संत विष्णुचित्त) की रचनाएं,(अनुवादक) पंडित श्रीनिवास राघवन, दिव्य प्रबंध (आल्वारों की वाणियाँ), सं. 1980, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल, पृ.–45.
10. वही, पृ.–29.
11. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–1, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–180.
12. पेरियाल्वार तिरुमोलि (संत विष्णुचित्त) की रचनाएं,(अनुवादक) पंडित श्रीनिवास राघवन, दिव्य प्रबंध (आल्वारों की वाणियाँ), सं. 1980, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल, पृ.–26.
13. वही, पृ.–23.
14. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–1, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–234.
15. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–1, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 395, पृ. –232.

16. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–2, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 1442, पृ. –189–190.
17. एन. सुंदरम्; दिव्य प्रबंधम्, प्रथम सं. 2004, साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35, फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली–110001, पृ.–109
18. वही, पृ.–110
19. (प्रस्तुतकर्ता) डॉ. पी. जयरामन; संत वाणी, खण्ड–5, प्रथम सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–263.
20. वही, 263.
21. पेरियाल्वार तिरुमोलि (संत विष्णुचित्त) की रचनाएं,(अनुवादक) पंडित श्रीनिवास राघवन, दिव्य प्रबंध (आल्वारों की वाणियाँ), सं. 1980, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल, पद संख्या 323, पृ.–82.
22. वही, पृ.–86.
23. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–3, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 586, पृ. –437–438.
24. वही, 438.
25. सूरसागर, टीकाकार डॉ. किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–1, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 570, पृ. –325.
26. (प्रस्तुतकर्ता) डॉ. पी. जयरामन; संत वाणी, खण्ड–5, प्रथम सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–247.
27. वही, पृ.–247.
28. पेरियाल्वार तिरुमोलि (संत विष्णुचित्त) की रचनाएं,(अनुवादक) पंडित श्रीनिवास राघवन, दिव्य प्रबंध (आल्वारों की वाणियाँ), सं. 1980, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल, पद संख्या 323, पृ.–149.
29. वही, पृ.–150.
30. वही, पृ.–151.
31. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–3, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 247, पृ. –221.
32. वही, पृ.–221.

33. पेरियाल्वार तिरुमोलि (संत विष्णुचित्त) की रचनाएं,(अनुवादक) पंडित श्रीनिवास राघवन, दिव्य प्रबंध (आल्वारों की वाणियाँ), सं. 1980, हिंदी भवन, विश्वभारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल, पद संख्या 323, पृ.–255
34. वही, पृ.–157.
35. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–3, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़ग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–262.
36. वही, पद संख्या 342, पृ.–281.
37. वही, पृ.–281.
38. (प्रस्तुतकर्ता) डॉ पी. जयरामन; संत वाणी, खण्ड–5, प्रथम सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–303.
39. वही, पृ.– 303.
40. वही, पृ.–307.
41. वही, पृ.–307.
42. वही, पृ.–311.
43. वही, पृ.–311.
44. वही, पृ.–311.
45. वही, पृ.–364.
46. वही, पृ.–364.
47. वही, पृ.–378.
48. वही, पृ.–378.
49. सं• हरबंसलाल शर्मा; सूरदास, दूसरा सं. 2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, पृ.–234.
50. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–2, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़ग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 1540, पृ. –238.
51. डॉ प्रेमशंकर; भक्तिकाव्य का समाजदर्शन, द्वितीय सं. 2007, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–140.
52. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–2, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़ग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 1448, पृ. –193.

53. आचार्य रामचंद्र शुक्ल (भूमिकाः रामकिशोर शर्मा), त्रिवेणी, लोकभारती प्रकाशन, 15 ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–55.
54. हजारी प्रसाद द्विवेदी; सूर–साहित्य, तीसरा सं. 1989, तीसरी आवृति 2013, राजकमल प्रकाशन, 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–110002., पृ.–89.
55. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–2, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 1960, पृ. –397.
56. आचार्य रामचंद्र शुक्ल (भूमिकाः रामकिशोर शर्मा); त्रिवेणी, लोकभारती प्रकाशन, 15 ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पृ.–59.
57. मैनेजर पाण्डेय; अनभै साँचा, प्रथम सं. 2002, पूर्वोदय प्रकाशन, 7/8 दरियागंज, नई दिल्ली–110002, पृ.–20.
58. मैनेजर पाण्डेय; भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, सं. 1993, आवृति सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–168.
59. रामस्वरूप चतुर्वेदी; हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, प्रथम सं. 1986, तेइसवां सं. 2012, पृ.–45.
60. सं• हरबंसलाल शर्मा; सूरदास, दूसरा सं. 2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, पृ.–32–33.
61. मैनेजर पाण्डेय; भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, सं. 1993, आवृति सं. 2012, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–296.
62. सूरसागर, टीकाकार डॉ किशोरीलाल गुप्त, खण्ड–2, सं. 2005, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्ड़िग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पद संख्या 1830, पृ. –383.
63. राजमल बोरा; भारतीय भक्ति साहित्य, सं. 1994, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002, पृ.–123.
64. डॉ पी. जयरामन; भक्ति के आयाम, प्रथम सं. 2003, वाणी प्रकाशन, 4695, 21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, पृ.–689.
65. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय; हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. 2009, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–211001, पृ.–161–162.